पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2021 का दीवानी रिट रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 9190

==

रत्नेश कुमार, पिता- स्वर्गीय जगन्नाथ राउत, निवासी- मोहल्ला-नया टोला, कुम्हरार, थाना-अगमकुआँ, टाउन पटनासिटी, जिला-पटना।

.... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम्

1. बिहार राज्य।
2. अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक, (कानून और व्यवस्था) पटना।
3. उप महानिरीक्षक, चंपारण रेंज, बेतिया।
4. पुलिस अधीक्षक, मोतिहारी, पूर्वी चंपारण।
5. पुलिस उपाधीक्षक सह पूछताछ अधिकारी, सिकराहना (ढाका), मोतिहारी, पूर्वी चंपारण।

.... उत्तरदाता/ओं

==

उपस्थितः

याचिकाकर्ताओं के लिए : श्री अखिलेश दत्ता वर्मा

उत्तरदाताओं के लिए : श्री अजय कुमार, एसी से जीपी-4

==

अधिनियम/धाराएं/नियम:

- *बिहार सीसीए नियम, 2005 के नियम 2(एफ) (iii), 14, 15, 17 और 18*
- *संविधान का अनुच्छेद 311*
- *बिहार पुलिस मैनुअल का खंड 825 (सी)*

संदर्भित मामले:

- भारत संघ एवं अन्य बनाम बी.वी. गोपीनाथ, (2014) 1 एससीसी 351 में रिपोर्ट किया गया
- रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य, (2009) 2 एससीसी 570 में रिपोर्ट किया गया
- मोनी शंकर बनाम भारत संघ, (2008) 3 एससीसी 484 में रिपोर्ट किया गया
- उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य। बनाम सरोज कुमार सिन्हा, (2010) 2 एससीसी 772 में रिपोर्ट किया गया
- कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं अन्य, (1999) 2 एससीसी 10 में रिपोर्ट किया गया
- शशि भूषण प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 12013/2012
- उदय प्रताप सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2017 में रिपोर्ट किया गया (4) पीएलजेआर 195
- विजेंद्र प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2019 में रिपोर्ट किया गया (4) पीएलजेआर 1046
- अरुण कुमार बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2019 में रिपोर्ट किया गया (3) बीएलजे 221

रिट याचिका- याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति के आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई।

याचिकाकर्ता एक उप-निरीक्षक थे। रिश्वतखोरी के आरोपों के बाद, पुलिस विभाग ने याचिकाकर्ता के कथित कृत्य को कदाचार माना। पुलिस अधीक्षक द्वारा चार्जशीट तैयार की गई, और विभागीय कार्यवाही के बाद याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। याचिकाकर्ता ने इस आदेश को रिट याचिका में चुनौती दी, जिसे स्वीकार कर लिया गया।

याचिकाकर्ता ने रिट के आदेश के अनुसार पुनः अपनी सेवा ज्वाइन की, लेकिन उनकी ज्वाइनिंग स्वीकार नहीं की गई, और उन्हें सेवा में नहीं माना गया। इसके बाद, एक

दूसरी चार्जशीट जारी की गई, जो व्यावहारिक रूप से पहली चार्जशीट की पुनरावृत्ति थी, और विवादित आदेश द्वारा याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त कर दी गई।

निर्णय -

1. *अधिकार और पद की समानता:परिस्थितियां चाहे जो भी हों, यदि किसी व्यक्ति की नियुक्ति एक विशेष प्राधिकारी द्वारा की गई है, तो उसे उससे निम्न स्तर के अधिकारी द्वारा बर्खास्त नहीं किया जा सकता। (पैरा 17)*
2. *न्यायिक प्रक्रिया और प्राकृतिक न्याय:विभागीय कार्यवाही और उसमें जांच एक अर्ध-न्यायिक प्रक्रिया होती है। इसमें साक्ष्य अधिनियम के सभी प्रावधान पूर्ण रूप से लागू नहीं होते हैं, लेकिन न तो जांच अधिकारी और न ही अनुशासनिक प्राधिकारी प्राकृतिक न्याय के मूल सिद्धांतों का उल्लंघन कर सकते हैं। (पैरा 22)*
3. *साक्ष्य की जांच में खामी:*

- *इस मामले में, जांच अधिकारी ने किसी भी साक्ष्य की जांच नहीं की।*
- *जांच अधिकारी और अनुशासनिक प्राधिकारी ने सतर्कता जांच ब्यूरो के ट्रैप मेमो और याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत दर्ज आपराधिक मामले पर भरोसा किया।*
- *हालांकि, जांच के दौरान ट्रैप मेमो को साबित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया, और सतर्कता जांच ब्यूरो के उन सदस्यों से पूछताछ नहीं की गई, जिन्होंने ट्रैप की कार्रवाई की थी।*
- *यहां तक कि सतर्कता जांच ब्यूरो से जुड़े पुलिस अधिकारी द्वारा दी गई लिखित शिकायत की भी जांच नहीं की गई। (पैरा 24)*

जांच अधिकारी, अनुशासनिक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी की रिपोर्ट इस मामले में स्पष्ट रूप से अवैध पाई गई है, क्योंकि उनके निष्कर्ष किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं थे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, विवादित आदेशों को रद्द और खारिज किया जाता है। (पैरा 38)

==

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री बिबेक चौधरी

सी. ए. वी. निर्णय

तारीखः08-07-2024

1. याचिकाकर्ता बिहार पुलिस सेवा में सब-इंस्पेक्टर था। वह 5 सितंबर 1994 को पुलिस सब-इंस्पेक्टर के रूप में सेवा में शामिल हुआ था। आरोप है कि 09.08.2007 को जब वह पूर्वी चंपारण जिले के ढाका पुलिस स्टेशन के पचपकड़ी चौकी में तैनात था, तो उसे सतर्कता जांच ब्यूरो ने रिश्वत लेने के आरोप में गिरफ्तार किया था। इस तरह के आरोप के बाद, पुलिस विभाग ने माना कि याचिकाकर्ता का कथित कृत्य कदाचार था। जिसके परिणामस्वरूप उसे 31 अगस्त 2007 को आरोप-पत्र की सेवा के बाद विभागीय कार्यवाही का सामना करने का निर्देश दिया गया था।

2. अनुलग्नक-2 पुलिस अधीक्षक, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी द्वारा जारी आरोप-पत्र है, जिसमें अन्य बातों के *साथ-साथ* यह भी कहा गया है: -

''श्री अनिल कुमार सिंह, पुलिस अधीक्षक प्रभारी सह अनुमंडल पुलिस अधिकारी ने पुलिस अधीक्षक, पूर्वी चंपारण को सूचित किया कि रत्नेश कुमार, याचिकाकर्ता को 9 अगस्त 2007 को सतर्कता जांच ब्यूरो द्वारा एक जाल में गिरफ्तार किया गया था, जब वह रिश्वत ले रहा था। सतर्कता जांच ब्यूरो से जुड़ी पुलिस ने सामान्य डायरी प्रविष्टि संख्या 1607, दिनांक 08.08.2007 को सुबह 07.30 बजे के आधार पर उक्त जाल का आयोजन किया। ढाका पुलिस के ऑन-ड्यूटी पुलिस अधिकारी और एसएचओ, धर्मेंद्र कुमार और पुलिस अधिकारियों ने सतर्कता जांच ब्यूरो द्वारा याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी के उक्त तथ्य की पुष्टि की, जब वह कथित रूप से रिश्वत ले रहा था।''

3. याचिकाकर्ता का आरोप है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही से संबंधित कानून के तहत आरोप पत्र का प्रारूपण उस तरीके से नहीं किया गया था। जो भी हो, विभागीय कार्यवाही के बाद, याचिकाकर्ता को पुलिस उप महानिरीक्षक, चंपारण रेंज, बेतिया द्वारा जारी दिनांक 30 नवंबर 2011 के आदेश के तहत दंडित किया

गया और सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। याचिकाकर्ता ने डीआईजी, चंपारण रेंज, बेतिया के आदेश के खिलाफ पुलिस महानिरीक्षक, मुजफ्फरपुर के समक्ष अपील दायर की। हालांकि, उन्होंने डीआईजी पुलिस के आदेश की पुष्टि की और याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित बर्खास्तगी के आदेश की पुष्टि की।

4. याचिकाकर्ता ने सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 1328/2017 में इस न्यायालय के समक्ष उक्त आदेश को चुनौती दी। 19 फरवरी 2018 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका को अनुमति दी गई और इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी के 30 नवंबर 2011 के आदेश और आईजी, पुलिस के 16 जून 2012 के आदेश को रद्द कर दिया और प्रतिवादी प्राधिकारियों को निर्देश दिया कि वे रिट याचिकाकर्ता को सेवा में शामिल होने की अनुमति दें और प्रतिवादियों को कानून के अनुसार मामले को आगे बढ़ाने की स्वतंत्रता के साथ सभी परिणामी लाभ जारी करें।

5. याचिकाकर्ता ने सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 1328/2017 में पारित आदेश के अनुसार 19 फरवरी 2018 को पुनः अपनी सेवा में कार्यभार ग्रहण किया, लेकिन उसकी नियुक्ति स्वीकार नहीं की गई, इसलिए उसे सेवा में नहीं माना गया।

6. 24 अप्रैल 2018 को पुनः विभागीय आरोप-पत्र जारी किया गया, जो वस्तुतः 31 अगस्त 2007 के आरोप-पत्र की ही प्रतिकृति थी।

7. याचिकाकर्ता का तर्क है कि चूंकि उसे सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 1328/2017 में इस न्यायालय के निर्देशानुसार सेवा में शामिल होने की अनुमति नहीं दी गई, इसलिए उसे सेवा में नहीं माना जा सकता और इसलिए 24 अप्रैल 2018 को पुलिस अधीक्षक मोतिहारी द्वारा जारी किया गया दूसरा प्रभार ज्ञापन अवैध, निष्क्रिय है और याचिकाकर्ता पर कोई विभागीय कार्यवाही नहीं की गई क्योंकि उसे सेवा में शामिल होने की अनुमति नहीं दी गई। पुलिस अधीक्षक, मोतिहारी विभागीय प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं कर सकते क्योंकि याचिकाकर्ता को पुलिस महानिरीक्षक (प्रशासन) पटना बिहार द्वारा नियुक्त किया गया था। भूमि के स्थापित कानून के अनुसार नियुक्ति प्राधिकारी ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी है।

8. याचिकाकर्ता का आरोप है कि अनुमंडल पदाधिकारी को जांच पदाधिकारी तथा इंस्पेक्टर ढाका अर्जुन कुमार को प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी नियुक्त किया गया था। याचिकाकर्ता का आगे आरोप है कि बिहार सरकारी सेवक

(वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 2005 (जिसे आगे संक्षेप में "बिहार सीसीए नियमावली, 2005" कहा जाएगा) के नियम 17 एवं 18 के प्रावधानों के तहत जांच की जानी चाहिए। लेकिन जांच के दौरान उक्त नियमों का पालन नहीं किया गया। विभागीय जांच कार्यवाही में याचिकाकर्ता ने शुरू में ही विभागीय कार्यवाही की प्रामाणिकता पर सवाल उठाते हुए कहा कि सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 1328/2017 में पारित आदेश के तहत उसे सेवा में शामिल होने की अनुमति नहीं थी तथा आरोप पत्र समर्पित करने की तिथि को याचिकाकर्ता बिहार सरकार के पुलिस विभाग का कर्मचारी नहीं था। जब याचिकाकर्ता ने उपरोक्त दलील दी, तो प्रतिवादियों ने 1 मई 2018 को उनकी ज्वाइनिंग स्वीकार कर ली। अपनी ज्वाइनिंग के बाद, याचिकाकर्ता ने प्रभार से संबंधित दस्तावेजों की आपूर्ति के लिए बिहार सीसीए नियम, 2005 के नियम 17 (11) के तहत 16 नवंबर 2019 को विस्तृत आवेदन दायर किया है।

9. हालांकि, उन्हें कोई भी दस्तावेज नहीं दिया गया, जिस पर जांच अधिकारी ने बिहार सीसीए नियमावली 2005 के नियम 17(11) के अनिवार्य प्रावधानों के रूप में भरोसा किया हो। इसके बाद, याचिकाकर्ता से आरोप-पत्र पर कोई जवाब प्राप्त किए बिना, किसी गवाह की जांच किए या कोई दस्तावेज प्रदर्शित किए बिना, जांच अधिकारी ने 25 फरवरी 2020 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। याचिकाकर्ता ने कहा कि बिहार सीसीए नियमावली, 2005 के नियम 14, 15, 16, 17 और 18 में वर्णित प्रक्रियात्मक आवश्यकता का पालन जांच अधिकारी द्वारा नहीं किया गया था। जांच अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट पुलिस अधीक्षक, मोतिहारी को सौंपी, जिन्होंने अनुशासनात्मक प्राधिकारी के रूप में कार्य किया और याचिकाकर्ता को 30 मार्च 2020 को दूसरा कारण बताओ दाखिल करने के लिए कहा। याचिकाकर्ता ने अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों का खंडन करते हुए और अनुशासनात्मक प्राधिकारी के रूप में अपनी भूमिका के संबंध में पुलिस अधीक्षक के अधिकार के साथ अपना कारण बताओ दाखिल किया, लेकिन 11 जून 2020 को पुलिस अधीक्षक, मोतिहारी ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी के रूप में कार्य करते हुए याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने की सजा की सिफारिश की।

10. पुलिस महानिरीक्षक, बेतिया ने 18 जून 2020 के अपने आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को बर्खास्त करने के आदेश को स्वीकार कर लिया।याचिकाकर्ता ने रिट याचिका दायर करके 11 जून 2020 को पुलिस अधीक्षक, मोतिहारी द्वारा

जारी की गई सिफारिश और 18 जून 2020 को चंपारण रेंज के पुलिस उप महानिरीक्षक के आदेश दोनों को चुनौती दी है।

11. वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता ने पुलिस उप महानिरीक्षक, चंपारण रेंज, बेतिया द्वारा पारित दिनांक 18 जून 2020 के आदेश और दिनांक 7 जुलाई 2020 के पत्र संख्या 438/2020 को निरस्त करने के लिए सर्टिओरी की प्रकृति में रिट जारी करने की प्रार्थना की है, जिसके आधार पर याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त कर दी गई थी और साथ ही अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक (कानून और व्यवस्था), पटना द्वारा पारित दिनांक 22 अक्टूबर 2020 के आदेशों को भी निरस्त करने के लिए प्रार्थना की है, जिसमें पुलिस उप महानिरीक्षक, चंपारण, बेतिया द्वारा पारित सेवा समाप्ति के आदेश को बरकरार रखा गया था, साथ ही परिणामी और आकस्मिक राहत भी दी गई थी।

12. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता की नियुक्ति पुलिस महानिरीक्षक, (प्रशासन) बिहार, पटना द्वारा की गई थी। नियुक्ति प्राधिकारी होने के नाते, अनुशासनात्मक कार्यवाही केवल उनके द्वारा या उनके आदेश के तहत उनके अधीनस्थ किसी अधिकारी द्वारा ही की जा सकती है।

13. इस मामले में नियुक्ति प्राधिकारी अथवा उसके आदेश के अधीन किसी अधिकारी द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही नहीं की गई। पुलिस अधीक्षक, पूर्वी चंपारण, बेतिया ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध दूसरा आरोप-पत्र जारी किया (अनुलग्नक 4)। पहले आरोप-पत्र और दूसरे आरोप-पत्र में एकमात्र अंतर यह है कि दूसरे विभागीय कार्यवाही में अर्जुन कुमार, एस.एच.ओ., ढाका पुलिस स्टेशन को प्रस्तुतकर्ता अधिकारी नियुक्त किया गया था। उक्त आरोप-पत्र के कॉलम 10 में विभागीय आदेश संख्या 53/2007 का उल्लेख है। गवाहों के नाम वाले कॉलम में यह कहा गया है कि गवाह विभागीय आदेश संख्या 53/2007 के अनुसार होंगे और गवाह द्वारा उद्धृत या आधार बनाए गए दस्तावेजों को याचिकाकर्ता के विरुद्ध दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में आधार बनाया जाएगा।

14. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दूसरा आरोप-पत्र पुलिस अधीक्षक, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी द्वारा 24 अप्रैल 2018

को जारी किया गया था, जब याचिकाकर्ता सेवा में शामिल नहीं था। इसलिए, दूसरा आरोप-पत्र समय से पहले, अवैध और मनमाना है।

15. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा दी गई दलील का एक और पहलू यह है कि याचिकाकर्ता ने एक दस्तावेज की मांग की थी, जिस पर जांच अधिकारी जांच के दौरान भरोसा कर सकते थे, लेकिन उन्हें कोई दस्तावेज नहीं दिया गया। दूसरी ओर, किसी भी गवाह या किसी भी दस्तावेज की जांच किए बिना याचिकाकर्ता के खिलाफ जांच रिपोर्ट पेश कर दी गई। उक्त जांच रिपोर्ट पेश किए जाने के बाद, पुलिस अधीक्षक, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी ने एक पत्र लिखकर याचिकाकर्ता को प्रस्तावित बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ दूसरा कारण बताओ प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने 1 जून 2020 को कारण बताओ का अपना विस्तृत जवाब पेश किया।

16. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह बताया गया है कि बिहार सी.सी.ए. नियम, 2005 के नियम 2(एफ) (iii) में "नियुक्ति प्राधिकारी" को उस प्राधिकारी के रूप में परिभाषित किया गया है जिसने सरकारी सेवक को ऐसी सेवा में नियुक्त किया है। बिहार सी.सी.ए. नियम, 2005 के नियम 2 (जे) में "अनुशासनात्मक प्राधिकारी" को नियुक्ति प्राधिकारी या उसके द्वारा अधिकृत किसी अन्य प्राधिकारी के रूप में परिभाषित किया गया है, जो नियमों के तहत बिहार सी.सी.ए. नियम, 2005 के नियम 14 में निर्दिष्ट किसी भी दंड को सरकारी सेवक पर लगाने के लिए सक्षम होगा।

17. इस प्रकार, यह स्पष्ट हो जाता है कि परिस्थितियाँ चाहे जो भी हों, एक बार जब कोई व्यक्ति किसी विशेष प्राधिकारी द्वारा नियुक्त हो जाता है, तो उसे नियुक्त करने वाले से निम्न पद वाले किसी भी अधिकारी द्वारा बर्खास्त नहीं किया जा सकता। किसी मामले में, किसी व्यक्ति की सेवा में नियुक्ति के बाद नियमों में परिवर्तन हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप नियुक्ति प्राधिकारी की स्थिति में कमी आ सकती है। हालाँकि, इससे संविधान के अनुच्छेद 311 के लागू होने पर कोई फर्क नहीं पड़ता। हमें यह देखना होगा कि कर्मचारी की नियुक्ति के आदेश पर हस्ताक्षर करने वाला अधिकारी कौन था। यदि सजा के आदेश पर उस अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किए जाते हैं, जो पद में निम्न पद वाला होता है, तो संविधान के अनुच्छेद 311 का उल्लंघन होने के कारण आदेश को रद्द कर दिया जाना चाहिए।

18. चूंकि याचिकाकर्ता की नियुक्ति पुलिस महानिरीक्षक (प्रशासन), बिहार द्वारा की गई थी, इसलिए सेवा समाप्ति का अंतिम आदेश उनके द्वारा पारित किया जाना चाहिए था।

19. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने इसके बाद ***भारत संघ एवं अन्य बनाम बी.वी. गोपीनाथ*** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला देते हुए ***(2014) 1 एससीसी 351*** में रिपोर्ट किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(1) के तहत संघ या राज्य की सिविल सेवा के सदस्य को केवल उसके नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा ही बर्खास्त या हटाया जा सकता है। बिहार सीसीए नियम, 2005 के नियम 15 में भी यही सिद्धांत निर्धारित किया गया है। नियम 15 के उप-नियम (2) में कहा गया है -

> *"उप-नियम (1) के प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, नियम 14 में निर्दिष्ट कोई भी दंड नियुक्ति प्राधिकारी या किसी ऐसे प्राधिकारी द्वारा, जिसके अधीन नियुक्ति प्राधिकारी है, या सरकार के किसी सामान्य या विशेष आदेश द्वारा इस संबंध में किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा सरकारी कर्मचारी पर लगाया जा सकता है। चूंकि याचिकाकर्ता के खिलाफ बर्खास्तगी का अंतिम आदेश उसके नियुक्ति प्राधिकारी या किसी ऐसे प्राधिकारी द्वारा, जिसके अधीन नियुक्ति प्राधिकारी है, या सरकार के किसी सामान्य या विशेष आदेश द्वारा इस आदेश के लिए सशक्त किसी प्राधिकारी द्वारा पारित नहीं किया गया था, इसलिए प्रतिवादी यह साबित करने में विफल रहे कि सरकार द्वारा पारित कोई ऐसा सामान्य या विशेष आदेश है जिसके तहत पुलिस अधीक्षक या पुलिस उप महानिरीक्षक याचिकाकर्ता के खिलाफ बर्खास्तगी का आदेश पारित कर सकते हैं। इसलिए, यह आदेश ही अवैध है और नियम के तहत लागू नहीं होता है।"*

20. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के ***रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक*** एवं अन्य के मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय का भी उल्लेख किया है, जिसकी रिपोर्ट ***(2009) 2 एससीसी 570*** में दी गई है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 17 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ***मोनी***

शंकर बनाम भारत संघ, जिसकी रिपोर्ट ***(2008) 3 एससीसी 484*** में दी गई है, में की गई टिप्पणी दर्ज की है, जो इस प्रकार है:-

> *"17. विभागीय कार्यवाही अर्ध-न्यायिक है। यद्यपि साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान उक्त कार्यवाही में लागू नहीं होते, फिर भी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाना आवश्यक है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने वाली अदालतें इस बात पर विचार करने की हकदार हैं कि क्या किसी दोषी अधिकारी की ओर से कदाचार किए जाने का अनुमान लगाते समय प्रासंगिक साक्ष्य को ध्यान में रखा गया है और क्या अप्रासंगिक तथ्यों को उससे बाहर रखा गया है। तथ्यों पर अनुमान ऐसे साक्ष्य पर आधारित होना चाहिए जो कानूनी सिद्धांतों की आवश्यकताओं को पूरा करते हों। इस प्रकार, न्यायाधिकरण इस आधार पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने का हकदार था कि विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, भले ही उसे उसके अंकित मूल्य पर संपूर्ण रूप से सही माना जाए, सबूत के भार की आवश्यकताओं को पूरा करता है, अर्थात, संभाव्यता की प्रबलता। यदि ऐसे साक्ष्यों पर आनुपातिकता के सिद्धांत की कसौटी पर खरा नहीं उतरा है, तो न्यायाधिकरण को हस्तक्षेप करने का अधिकार है। हमें यह रिकॉर्ड में दर्ज करना होगा कि अनुचितता का सिद्धांत आनुपातिकता के सिद्धांत को रास्ता दे रहा है।*

21. अंत में, ***रूप सिंह नेगी*** (उपर्युक्त) मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैरा 23 में निम्नानुसार माना गया है: -

> *"23. इसके अलावा, अनुशासनात्मक प्राधिकरण और अपीलीय प्राधिकरण के आदेश का कोई भी कारण समर्थित नहीं है। चूंकि उनके द्वारा पारित आदेशों के गंभीर नागरिक परिणाम हैं, इसलिए उचित कारण बताए जाने चाहिए थे। यदि जांच अधिकारी ने अपीलकर्ता द्वारा किए गए इकबालिया बयान पर भरोसा किया होता, तो कोई कारण नहीं था कि उसी साक्ष्य के आधार पर आपराधिक अदालत द्वारा पारित आरोप मुक्त करने*

के आदेश पर विचार क्यों नहीं किया जाना चाहिए था।दोष को इंगित करने वाली रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री को साबित करना आवश्यक है। कुछ ऐसे साक्ष्यों के आधार पर निर्णय लिया जाना चाहिए, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य हों। साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान विभागीय कार्यवाही में लागू नहीं हो सकते हैं, लेकिन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू होते हैं। चूंकि जांच अधिकारी की रिपोर्ट केवल अपनी गवाही और अनुमानों पर आधारित थी, इसलिए इसे कायम नहीं रखा जा सकता था। जांच अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से किसी भी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं थे। जैसा कि सर्वविदित है, संदेह, चाहे कितना भी अधिक क्यों न हो, किसी भी परिस्थिति में कानूनी सबूत का विकल्प नहीं माना जा सकता है।"

22. इस प्रकार, यद्यपि विभागीय कार्यवाही और उसमें जांच एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही है और साक्ष्य अधिनियम के सिद्धांत विभागीय कार्यवाही में पूरी तरह लागू नहीं होते हैं, लेकिन न तो जांच अधिकारी और न ही अनुशासनिक प्राधिकारी को प्राकृतिक न्याय के मूल सिद्धांतों का उल्लंघन करने की अनुमति है।

23. किसी सरकारी कर्मचारी की सेवा समाप्ति के गंभीर परिणाम होते हैं। इसलिए, अनुशासनात्मक प्राधिकरण यह दायित्व रखता है कि किसी भी बड़े दंड का आदेश कुछ सबूतों के आधार पर पारित किया जाना चाहिए।

24. इस मामले में जांच अधिकारी ने किसी साक्ष्य की जांच नहीं की। जांच अधिकारी और अनुशासनिक अधिकारी ने सतर्कता जांच ब्यूरो के ट्रैप मेमो और याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के विभिन्न दंडात्मक प्रावधानों के तहत दर्ज आपराधिक मामले पर भरोसा किया। हालांकि, जांच अधिकारी ने ट्रैप का गठन करने वाले सतर्कता जांच ब्यूरो के सदस्यों की जांच करके जांच के दौरान ट्रैप मेमो को साबित करने का कोई प्रयास नहीं किया। यहां तक कि सतर्कता जांच ब्यूरो से जुड़े पुलिस अधिकारी द्वारा प्रस्तुत लिखित शिकायत की भी जांच नहीं की गई।

25. ***रूप सिंह नेगी*** (उपर्युक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि चूंकि जांच अधिकारी की रिपोर्ट केवल अपने आप पर आधारित थी, साथ ही

इसमें अनुमान और अटकलें भी थीं, इसलिए इसे कायम नहीं रखा जा सकता था। जांच अधिकारी द्वारा निकाले गए अनुमान स्पष्ट रूप से किसी भी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं थे। जैसा कि सर्वविदित है, संदेह चाहे कितना भी अधिक क्यों न हो, किसी भी परिस्थिति में कानूनी सबूत का विकल्प नहीं माना जा सकता।

26. इस मुद्दे पर याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने जांच अधिकारी की भूमिका को एक स्वतंत्र निर्णायक के रूप में दर्शाने के लिए ***उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा (2010) 2 एससीसी*** *772* में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया है।

27. इसके अलावा, ***कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं अन्य, (1999) 2 एससीसी*** *10* में दर्ज मामले का हवाला देते हुए, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि न्यायालय याचिकाकर्ता के अपराध के निष्कर्ष में हस्तक्षेप कर सकता है यदि वह नए साक्ष्य पर आधारित है या ऐसा है जिस तक एक सामान्य विवेकशील व्यक्ति नहीं पहुंच सकता है या विकृत है या किसी उच्च अधिकारी के आदेश पर बनाया गया है।

28. दूसरी ओर, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि बिहार पुलिस मैनुअल की धारा 825 (सी) अपरिवर्तित बनी हुई है और भले ही याचिकाकर्ता को पुलिस महानिरीक्षक (प्रशासन), बिहार, पटना द्वारा नियुक्त किया गया था, पुलिस उप महानिरीक्षक को अनुशासनात्मक प्राधिकारी के रूप में नामित किया गया था और यह प्रावधान अब भी जारी है। प्रासंगिक प्रावधान इस प्रकार है: -

"825. दंड लगाने के लिए सशक्त अधिकारी.-

(क) किसी भी पुलिस अधिकारी को उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त नहीं किया जाएगा।

(ख) महानिरीक्षक उप-अधीक्षक से नीचे के पद के किसी भी पुलिस अधिकारी को नियम 824 में दी गई एक या अधिक सजाएं दे सकता है।

(ग) एक उप महानिरीक्षक अपने अधीनस्थ और उपाधीक्षक के पद से नीचे के किसी भी पुलिस अधिकारी पर एक निरीक्षक के मामले में बर्खास्तगी, अनिवार्य सेवानिवृत्ति और निष्कासन को छोड़कर नियम 824 में कोई भी दंड लगा सकता है।

(घ) पुलिस अधीक्षक अपने अधीनस्थ किसी भी पुलिस अधिकारी पर उपनिरीक्षक या सहायक उपनिरीक्षक के मामले में बर्खास्तगी, हटाने और अनिवार्य सेवानिवृत्ति को छोड़कर नियम 824 में उल्लिखित कोई भी या अधिक दंड लगा सकता है। यह ध्यान में रखा जाएगा कि यदि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा कोई जांच शुरू की गई है, तो परिणाम की एक रिपोर्ट उन्हें सूचना के लिए भेजी जाएगी। यदि आवश्यक हो, तो विभागीय कार्यवाही की फाइल भी इसके साथ भेजी जाएगी।

(ड.) नियम 824(एच) और (आई) में उल्लिखित दंड एस.डी.पी.ओ. द्वारा भी दिए जा सकते हैं, लेकिन इसका रिकॉर्ड अधीक्षक के कार्यालय में रखा जाएगा और यह भी देखा जाएगा कि दंड देने में अलग-अलग मानदंडों का इस्तेमाल नहीं किया जाता है।

(च) अधिनियम V, 1861 के अनुसार दंड देने या निलंबन का आदेश देने के लिए सक्षम अधिकारियों की सूची परिशिष्ट 84 में दी गई है।"

29. इस प्रकार, बिहार पुलिस मैनुअल के नियम 825 के खंड (सी) के अनुसार, उप महानिरीक्षक को अपने अधीनस्थ और उपाधीक्षक के पद से नीचे के किसी भी पुलिस अधिकारी पर नियम 824 के तहत बर्खास्तगी, अनिवार्य सेवानिवृत्ति और निरीक्षक के मामले में हटाने के अलावा कोई भी दंड लगाने का अधिकार है। याचिकाकर्ता पुलिस उपनिरीक्षक था। पुलिस उपमहानिरीक्षक द्वारा पूर्वी चंपारण, मोतिहारी के महानिरीक्षक द्वारा प्रस्तावित किए जाने पर उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। इसलिए, आरोपित आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं है। उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि विभागीय कार्यवाही में, संवैधानिक

न्यायालय को अनुशासनिक प्राधिकारी के आदेश की जांच करने के लिए द्वितीय अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य करने की शक्ति नहीं है। विभागीय कार्यवाही में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन लागू नहीं होता है। निगरानी जांच ब्यूरो की रिपोर्ट साबित करती है कि याचिकाकर्ता को रिश्वत लेते समय रंगे हाथों पकड़ा गया था। सतर्कता जांच ब्यूरो से जुड़ी पुलिस ने सतर्कता पुलिस थाने में रिपोर्ट पेश की। उक्त रिपोर्ट/शिकायत के आधार पर याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज किया गया। उक्त मामला अभी भी लंबित है। ये सभी दस्तावेज सतर्कता जांच ब्यूरो के सक्षम अधिकारी द्वारा सामान्य सरकारी कामकाज के दौरान तैयार किए गए रिकॉर्ड के मामले हैं। याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति का आदेश उक्त रिपोर्ट के आधार पर दिया गया। इसलिए जांच रिपोर्ट, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निष्कर्ष और सेवा समाप्ति के अंतिम आदेश की रिपोर्ट को तत्काल रिट याचिका में चुनौती नहीं दी जा सकती।

30. याचिकाकर्ता और प्रतिवादियों के विद्वान वकीलों को सुनने और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि: -

(i) भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत उच्च न्यायालय को विभागीय कार्यवाही में प्रस्तुत अभिलेख पर साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने का कोई अधिकार नहीं है;

(ii) तथापि, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह इस प्रश्न पर गौर करे कि विभागीय कार्यवाही में प्राकृतिक न्याय के मूल सिद्धांतों का पालन किया गया है या नहीं।

(iii) चूंकि जांच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण है, इसलिए उसकी रिपोर्ट कुछ साक्ष्यों के अनुरूप होनी चाहिए।

(iv) यदि विभागीय कार्यवाही में कोई निर्णय बिना किसी साक्ष्य पर आधारित पाया जाता है, तो ऐसे निष्कर्ष को रद्द किया जा सकता है।

31. ***सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 12013/2012 (शशि भूषण प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य)*** में पारित दिनांक 13 सितम्बर 2013 के अप्रकाशित निर्णय में, दोषी पुलिस अधिकारी ने यह मुद्दा उठाया कि उसकी नियुक्ति पुलिस महानिरीक्षक (प्रशासन), बिहार, पटना द्वारा की गई थी, अतः भारत के संविधान के

अनुच्छेद 311(1) के अन्तर्गत पुलिस महानिरीक्षक (प्रशासन) से नीचे के पद के अधिकारी द्वारा पारित सेवा समाप्ति का कोई भी आदेश केवल इसी आधार पर कायम नहीं रह सकता। इस न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में अनुशासनिक प्राधिकारी के साथ-साथ अपीलीय प्राधिकारी के आदेश को निरस्त कर दिया तथा मामले को अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर नए सिरे से कार्रवाई करने के लिए अनुशासनिक प्राधिकारी को वापस भेज दिया।

32. ***उदय प्रताप सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2017 (4) पीएलजेआर 195*** में रिपोर्ट किया गया, इस मामले का तथ्यात्मक स्कोर समान और एक जैसा है। याचिकाकर्ता को अवैध रिश्वत लेते हुए पकड़ा गया था। अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई और अंततः उसके खिलाफ बड़ी सजा दी गई। इस मामले में दोषी पुलिस अधिकारी ने यह भी दावा किया कि याचिकाकर्ता का अनुशासनात्मक प्राधिकारी पुलिस महानिरीक्षक है, वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक ने याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्यवाही शुरू की है और उसे अपना जवाब दाखिल करने का निर्देश भी दिया है। बिहार पुलिस मैनुअल के तहत वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक या नियुक्ति प्राधिकारी होने के नाते पुलिस महानिरीक्षक या प्रक्रिया शुरू करने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी होने के नाते पुलिस उप महानिरीक्षक द्वारा दिए गए किसी भी प्राधिकरण के अभाव में, विभागीय कार्यवाही की शुरुआत ही अधिकार क्षेत्र के बिना मानी गई।

33. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने माना कि जब प्रारंभिक कार्यवाही मूल आधार के अभाव के कारण दोषपूर्ण हो जाती है, तो बाद की कार्यवाही रद्द की जा सकती है।

34. ***विजेंद्र प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2019 (4) पीएलजेआर 1046*** में रिपोर्ट की गई, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश के अवलोकन पर पाया कि उक्त आदेश में केवल जांच अधिकारी की रिपोर्ट को अस्वीकार करने और परीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण का उल्लेख है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश में इस बात की कोई चर्चा नहीं है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ रिश्वत लेने का आरोप कैसे साबित हो सकता है। अपीलीय प्राधिकारी का आदेश संभवतः अतार्किक था क्योंकि उक्त आदेश में किसी भी सामग्री का उल्लेख नहीं है जिसके

आधार पर याचिकाकर्ता के खिलाफ की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई को उचित कहा जा सके।

35. अपीलीय प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता द्वारा अपने अपील ज्ञापन में लिए गए आधारों पर चर्चा नहीं की है और न ही इस बात पर कि ऐसे आधार उसे स्वीकार्य क्यों नहीं थे। विभागीय कार्यवाही के दौरान एकमात्र तथ्य जो साबित हुआ और जिस पर कोई विवाद नहीं था, वह यह था कि याचिकाकर्ता को सतर्कता दल द्वारा गिरफ्तार किया गया था। उसकी गिरफ्तारी को कदाचार नहीं कहा जा सकता। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने की सजा देने और अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश की पूरी कार्रवाई को रद्द कर दिया और उसे अलग कर दिया।

36. ***अरुण कुमार बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2019 (3) बीएलजे 221*** में रिपोर्ट की गई, इस न्यायालय ने ***रूप सिंह नेगी*** (उपर्युक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निर्णय के साथ-साथ मेमोरियल अपील में पारित आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया कि निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था। इस प्रकार, यह बिहार सीसीए नियम, 2005 के नियम 17(3) के साथ-साथ नियम 17(4) का उल्लंघन करता है।

37. चूंकि वर्तमान मामले की तथ्यात्मक परिस्थितियां पूर्वोक्त निर्णयों में निर्धारित परिस्थितियों के समान ही हैं, इसलिए मुझे याचिकाकर्ता के विरुद्ध विपरीत राय रखने का कोई कारण नहीं दिखता।

38. चूंकि इस मामले में जांच अधिकारी के साथ-साथ अनुशासनात्मक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी की रिपोर्ट स्पष्ट रूप से अवैध है, क्योंकि उनके निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं थे, इसलिए दिनांक 18.06.2020 और 22.10.2020 के विवादित आदेशों को रद्द किया जाता है।

39. तदनुसार, रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

40. याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया जाता है और वह अपने खिलाफ जांच के मद्देनजर अपने प्रारंभिक निलंबन की तारीख से सभी परिणामी लाभों का हकदार है, जो इस मामले का विषय है।

41. तथापि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(बिबेक चौधरी, न्यायमूर्ति)

एसकेएम/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।